(17)

B.Chap

सनातन संस्कृति और हिंदुत्व : भारत में उभरता सांस्कृतिक विमर्श

प्रिया मिश्रा

Vanya

वान्या पब्लिकेशंस, कानपुर

कानपुर - 208021 (उ.प्र.)

प्रथम संस्करण : 2026

ISBN : 978-93-7492-397-9

© लेखक

पुस्तक : सनातन संस्कृति और हिंदुत्व : भारत में उभरता सांस्कृतिक विमर्श

लेखक : प्रिया मिश्रा

प्रकाशक : **वान्या पब्लिकेशंस**

1A/2122 आवास विकास हंसपुरम्, नौबस्ता, कानपुर-208 021
Email : vanyapublicationskanpur@gmail.com
info@vanyapublications.com
Website : www.vanyapublications.com
Mob. : 9450889601, 7309038401

मुद्रक : सार्थक आफसेट

शब्द-सज्जा : रुद्र ग्राफिक्स

मूल्य : 1250/-

पुस्तक में प्रकाशित सभी शोध पत्र संबंधित लेखकों के स्वतंत्र विचार हैं। इनसे संपादक, प्रकाशक अथवा संबंधित संस्था का सहमत होना आवश्यक नहीं है। प्रस्तुत तथ्यों, संदर्भों, सूचनाओं एवं निष्कर्षों की प्रामाणिकता हेतु संपादक उत्तरदायी नहीं हैं।

आनंदीबेन पटेल
राज्यपाल, उत्तर प्रदेश

राज भवन
लखनऊ - 226 027

25 सितम्बर, 2025

सन्देश

मुझे यह जानकर अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि पं0 दीन दयाल उपाध्याय राजकीय बालिका स्नातकोत्तर महाविद्यालय, वाराणसी के समाजशास्त्र विभाग एवं ICSSR (NCR) के सौजन्य से 26 एवं 27 सितम्बर, 2025 को "Exploring Sanatana Culture and Hinduism Emerging Cultural Discourse in India" विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर एक स्मारिका का प्रकाशन भी किया जायेगा।

ऐसे आयोजन शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं को गहन चिंतन तथा संवाद का एक प्रभावशाली मंच प्रदान करते हैं। साथ ही हमारी समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर को आधुनिक युग की कसौटी पर पुनः स्थापित करने का एक महत्वपूर्ण माध्यम भी बनते हैं। मेरा विश्वास है कि यह संगोष्ठी और प्रकाशित स्मारिका विचारशील चर्चा को प्रोत्साहित करेंगे तथा आने वाली पीढ़ियों को अपनी जड़ों से जुड़ने और अपनी विरासत को समझने हेतु प्रेरित करेंगे।

संगोष्ठी के आयोजन एवं स्मारिका के प्रकाशन की सफलता हेतु मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

आनंदीबेन

(आनंदीबेन पटेल)

दूरभाष 0522 2230497 फैक्स 0522-2230488 ईमेल hgovup@gov.in वेबसाइट : www.upgovernor.gov.in

13. समाजिक न्याय में सनातन धर्म की भूमिका
बबिता कुमारी 85

14. सनातन धर्म और पर्यावरण
रोहित 90

15. सनातन धर्म में महिलाएँ : वैदिक ऋषियों से लेकर वर्तमान समय की आवाज तक
निक्की उपाध्याय 98

16. वैश्वीकरण से उत्पन्न पॉप कल्चर का सनातन धर्म पर प्रभाव : एक समाजशास्त्रीय अध्ययन
स्मिता केशरी 103

17. सनातन संस्कृति में 'सर्वधर्म समभाव': एक अवधारणात्मक एवं दार्शनिक विश्लेषण
संजय शर्मा 119

18. सनातन संस्कृति और हिन्दू धर्म : उत्पत्ति और विकास
अखिलेश सिंह 132

19. सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और समावेशी अध्यात्म : एक समालोचनात्मक अध्ययन
स्वर्णदीप सिंह 138

20. ग्रामीण युवाओं पर सोशल मीडिया गुरुओं के प्रभाव का समाजशास्त्रीय अध्ययन
अनामिका, मनीषा मिश्रा 145

21. सनातन धर्म एवं पर्यावरण संरक्षण: प्राचीन ज्ञान एवं आधुनिक आवश्यकता
प्रीति यादव 155

22. मानव स्वास्थ्य पर सनातनी भोजन का सकारात्मक प्रभाव
स्वस्तिका तिवारी, सुधा पाण्डेय 159

23. सनातन धर्म और हिंदुत्व में अंतर
श्रेया भारतीया 167

24. सनातन धर्म की समकालीन प्रासंगिकता
सुष्मिता कुमारी, मनोज कुमार 175

25. सनातन धर्म और हिंदुत्व : विस्तृत अध्ययन
उषा कुमारी 180

26. सनातन धर्म और सामाजिक न्याय की भूमिका
विमल कुमार 184

27. इन्दिरा गांधी और भारतीय सांस्कृतिक कूटनीति : सनातन संस्कृति का वैश्विक प्रसार
विपिन कुमार सरोज 193

28. हरिवंश पुराण का प्राचीन भारतीय साहित्य में स्थान
तमसा राय 200

29. सनातन धर्म और सामाजिक समावेशन : दलित, आदिवासी एवं वंचित समुदायों के संदर्भ में विश्लेषण
दशरथ लाल यादव 203

30. सनातन धर्म में अर्थ की भूमिका
सर्वेश कुमार सिंह 215

31. खेल : एक सांस्कृतिक विरासत
सौरभ सिंह 218

32. सनातन संस्कृति में 'सर्वधर्म समभाव' : एक अवधारणात्मक एवं दार्शनिक विश्लेषण
संजय शर्मा 223

33. भोजन सम्बन्धी अनुष्ठान
रेशमा, सुरेखा जायसवाल 236

34. सनातन धर्म और हिंदुत्व के बीच अंतर
रविन्द्र कुमार 238

35. सनातन धर्म में महिलाएँ : वैदिक काल से वर्तमान तक
नेहा राय 243

36. सनातन संस्कृति में प्रकृति-चेतना और सतत विकास : पारिस्थितिकी, नैतिकता एवं आधुनिक वैश्विक संदर्भ
कमलेश कुमार सिंह 250

37. सनातन धर्म के पुनरुत्थान में भक्ति आन्दोलन का योगदान
डॉ. शरद कुमार 259

32

सनातन संस्कृति में 'सर्वधर्म समभाव': एक अवधारणात्मक एवं दार्शनिक विश्लेषण

डॉ. संजय शर्मा

भूमिका

भारतीय संस्कृति का मूल स्वर सह–अस्तित्व, समरसता और सार्वभौमिक मानवता में निहित है। यहाँ धर्म केवल पूजा–पद्धति नहीं, बल्कि जीवन की नैतिक चेतना और सामाजिक संतुलन का आधार है। इसी दृष्टि से "सर्वधर्म समभाव" की अवधारणा भारतीय सभ्यता की आत्मा–समान रही है। ऋग्वेद का मंत्र "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" (ऋग्वेद, 1.164.46) इस विचार का प्रथम उद्घोष है कि सत्य एक है, किंतु ज्ञानी उसे अनेक रूपों में देखते हैं। यही भाव उपनिषदों के "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" (छांदोग्य उपनिषद्, 3.14.1) में स्पष्ट होता है, जहाँ सम्पूर्ण अस्तित्व को एक ही सत्य का विविध रूप कहा गया है।

भारतीय जीवन–दर्शन ने इस विचार को न केवल ग्रंथों में, बल्कि समाज के हर स्तर पर आत्मसात किया। जैन धर्म के अनेकांतवाद और बौद्ध धर्म के मध्यम मार्ग ने समभाव को आचरण का रूप दिया। भक्ति और सूफी परंपराओं ने इस विचार को जनमानस तक पहुँचाया, जहाँ कबीर, नानक, मीरा और अमीर खुसरो ने प्रेम और ईश्वर की एकता के माध्यम से विभाजन के हर स्वर को शांत किया। इस विचार का पुनर्प्रतिपादन अकबर के "सुलह–ए–कुल" और गांधी के "सत्य और अहिंसा" के दर्शन में हुआ, जहाँ धर्म का अर्थ समता और करुणा से जोड़ा गया।

स्वतंत्र भारत का संविधान (1950) इसी सनातन परंपरा का विधिक रूप है, जिसमें अनुच्छेद 25 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता और समानता की गारंटी दी गई है। यह भारतीय धर्मनिरपेक्षता का वह रूप है जो पश्चिमी सेक्युलरिज़्म से भिन्न होकर समावेशन पर आधारित है– जहाँ राज्य किसी धर्म का विरोध नहीं करता, बल्कि सब धर्मों के सम्मान को अपनी नीति का अंग बनाता है।

वर्तमान समय में जब वैश्विक समाज धार्मिक असहिष्णुता, सांस्कृतिक तनाव और पहचान की राजनीति से जूझ रहा है, तब भारतीय सनातन दृष्टि का "सर्वधर्म समभाव" सिद्धांत एक वैकल्पिक नैतिक और सांस्कृतिक समाधान के रूप में उभरता है। यह केवल धार्मिक समानता नहीं, बल्कि एक ऐसा दर्शन है जो मनुष्य, समाज और विश्व के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। यही इसकी स्थायी प्रासंगिकता है– कि भारत ने मानवता को सिखाया कि सहिष्णुता ही सर्वोच्च धर्म है।

प्रसंगिकता

वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में जब धार्मिक असहिष्णुता, मतभेद और साम्प्रदायिक तनाव बढ रहे हैं– जैसे संयुक्त राष्ट्र की 2023 रिपोर्ट में उल्लिखित 70प्रतिशत से अधिक देशों में धार्मिक संघर्ष–तब भारतीय सनातन संस्कृति का "सर्वधर्म समभाव" सिद्धांत एक संतुलित और मानव–केंद्रित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह केवल अतीत का आदर्श नहीं, बल्कि वर्तमान समाज के लिए सह–अस्तित्व, संवाद और विश्व–शांति की दिशा दिखाने वाला व्यावहारिक दर्शन है।

उद्देश्य

इस शोध का मुख्य उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि "सर्वधर्म समभाव" केवल वैदिक या सांस्कृतिक अवधारणा नहीं, बल्कि एक जीवंत दार्शनिक प्रक्रिया है जो समय–समय पर समाज के नैतिक ढाँचे को दिशा देती रही है। इसके माध्यम से यह समझना है कि यह विचार आज के बहुधर्मी एवं बहुसांस्कृतिक विश्व–समाज में पुनः किस प्रकार प्रासंगिक और मार्गदर्शक बन सकता है।

शोध समस्या

आज का समाज धार्मिक और वैचारिक विभाजन से ग्रस्त है। आधुनिक धर्मनिरपेक्षता जहाँ धर्म को राज्य से अलग करती है, वहीं "सर्वधर्म समभाव" धर्मों को एक साझा मानवीय भूमि पर लाता है। समस्या यह है कि आधुनिक राजनीतिक और सामाजिक संरचनाएँ इस सनातन दृष्टि से विमुख हो गई हैं। अतः यह अध्ययन इस प्रश्न का उत्तर खोजता है कि "क्या सर्वधर्म समभाव आधुनिक वैश्विक समाज में पुनः शांति और समरसता का दार्शनिक समाधान बन सकता है?"

परिकल्पना

शोध की आधारभूत परिकल्पना यह है कि "सर्वधर्म समभाव" भारतीय संस्कृति की आत्मा है– यह न केवल धार्मिक समानता का विचार है, बल्कि एक

नैतिक–मानवीय जीवन–दर्शन भी है। यह सिद्धांत धर्मों के बीच की सीमाएँ तोड़कर प्रेम, सत्य और सह – अस्तित्व पर आधारित विश्व–शांति की आधारशिला रखता है।

शोध पद्धति

यह अध्ययन गुणात्मक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धति पर आधारित है। इसमें "सर्वधर्म समभाव" की अवधारणा का दार्शनिक, ऐतिहासिक और सामाजिक विश्लेषण किया गया है। अध्ययन के लिए तुलनात्मक दृष्टि अपनाई गई है, जिसके अंतर्गत वैदिक, उपनिषद, सूफी भक्ति, और आधुनिक विचारों की समानताओं और अंतरों का विवेचन किया गया है। प्राथमिक स्रोतों में– ऋग्वेद, उपनिषद, भगवद्गीता, कबीर वाणी, महात्मा गांधी, विनोबा भावे, जयप्रकाश नारायण के लेखन तथा भारतीय संविधान को सम्मिलित किया गया है। द्वितीयक स्रोतों में –प्रकाशित ग्रंथ, शोध–लेख, और ऑनलाइन शोध–सामग्री का उपयोग किया गया है। अध्ययन की सीमा भारतीय सांस्कृतिक और दार्शनिक परिप्रेक्ष्य तक सीमित है। समस्त विश्लेषण वैचारिक, तुलनात्मक और आलोचनात्मक दृष्टि से किया गया है। शोध में पूर्ण नैतिकता, वस्तुनिष्ठता और पारदर्शिता का पालन किया गया है, जिससे निष्कर्षों की विश्वसनीयता और प्रामाणिकता बनी रहे।

साहित्य समीक्षा

साहित्य समीक्षा को दो भागों – भारतीय अध्ययन और पाश्चात्य एवं आधुनिक अध्ययन – में प्रस्तुत किया गया है।

(1) भारतीय अध्ययन– ऋग्वेद का मंत्र "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" (ऋग्वेद, 1.164.46) इस विचार की वैदिक जड़ है, जो विविधता में एकता का दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है। कबीर (बीजक, 1464 इस्वी) ने कहा – "हम न हिन्दू न मुसलमान, अल्ला राम का नाम एक है।" यह कथन भारतीय आस्था की एकात्म चेतना का प्रतीक है। तुलसीदास (रामचरितमानस, 1574 इस्वी) ने "सीयराममय सब जग जानी" कहकर सर्वव्यापकता का संदेश दिया। अमीर खुसरो (नुह सिपीहर, लगभग 1325 इस्वी) की वाणी में भी यही आत्मिक एकता झलकती है। महात्मा गांधी (1924) की "यंग इंडिया" में यह विचार मिलता है कि "सभी धर्म समान रूप से सत्य हैं, किंतु सभी अधूरे हैं।"सर्वपल्ली राधाकृष्णन (1953) की "प्रिंसिपल उपनिषद्स" में यह प्रतिपादित हुआ कि सत्य एक है, किंतु ज्ञानी उसे अनेक रूपों में ग्रहण करते हैं। रामनाथन श्रीनिवासन एवं पी.

एस ऐथल (2023) ने "अनरेवलिंग द डेथ्स ऑफ सनातन धर्मः एक्सप्लोरिंग द इटरनल प्रिंसिपल्स ऑफ हिंदुइज़्म" में यह प्रतिपादित किया कि सनातन धर्म का मूल स्वर "सर्वभूतहिताय" की भावना में निहित है। इन सभी भारतीय अध्ययनों से यह निष्कर्ष निकलता है कि "सर्वधर्म समभाव" भारतीय संस्कृति के उस सनातन आदर्श का प्रतीक है, जहाँ धर्म का उद्देश्य विभाजन नहीं, बल्कि एकात्मता और नैतिक समरसता की स्थापना है।

(2) पाश्चात्य एवं आधुनिक अध्ययन– आधुनिक विद्वानों ने "सर्वधर्म समभाव" को भारतीय धर्मनिरपेक्षता और सांस्कृतिक बहुलता की दृष्टि से परखा है। एन्क्रिको बेल्ट्रामिनी (2023) ने "इंडियन थियोलॉजी एंड द क्राइसिस ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़्म" में कहा कि भारत में सेक्यूलरिज़्म धर्म से विरोध नहीं, बल्कि संवाद की प्रक्रिया है। सारिता पिर्साली (2022) ने "होमोजिनिटी ऑफ रिलिज़न" में दिखाया कि औपनिवेशिक सुधार आंदोलनों ने धार्मिक बहुलता को सीमित किया। इम्से जुंगबा (2016) ने "हिंदुत्वः द आइडियोलॉजी, द इम्पैक्ट एंड द इम्प्लिकेशन्स" में यह स्पष्ट किया कि "हिंदुत्व" सांस्कृतिक एकरूपता की विचारधारा है, जबकि "सर्वधर्म समभाव" विविधता में एकता की दिशा में अग्रसर है। वसुंधरा डालमिया एवं फॉन स्टिटेनक्रोन हेनरिख (2000) की पुस्तक " रिप्रेजेंटिंग हिंदुइज़्म : द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस ट्रेडिशन्स एंड नेशनल आइडेंटिटी" हिंदू धर्म की पहचान और उसके सामाजिक–राजनीतिक निर्माण की प्रक्रिया का विश्लेषण करती है। यह दर्शाती है कि भारतीय धर्म परंपराएँ स्थिर नहीं, बल्कि निरंतर बदलती सांस्कृतिक व्याख्याएँ हैं।

राजीव भार्गव (2007) की "द डिसटिंक्टिवनेस ऑफ इंडियन सेक्युलरिज़्म क्रिटीक इंटरनैशनल" के अनुसार भारतीय धर्मनिरपेक्षता "समान सम्मान" पर आधारित है। ग्यान प्रकाश (1999) "अनदर रीजन : साइंस एंड द इमैजिनेशन ऑफ मॉडर्न इंडिया" ने भारतीय आधुनिकता को अपनी सभ्यतागत चेतना से जोड़ा जबकि सुनील खिलनानी (1998) ने "द आइडिया ऑफ इंडिया" में भारतीय राज्य को न्याय और मुक्ति का माध्यम बताया। केनेथ जोन्स (1989) की पुस्तक "सोशियोः रिलिजियस रीफॉर्म मूवमेंट्स इन ब्रिटिश इंडिया" औपनिवेशिक सुधार आंदोलनों का विश्लेषण करती है और 'सर्वधर्म समभाव' की आधुनिक पृष्ठभूमि को समझने में सहायक है।" हर्जोट ओबरॉय (1994) ने "द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस बाउंड्रीजः कल्चर, आइडेंटिटी, एंड डायवर्सिटी इन द सिख ट्रेडिशन" में धार्मिक सीमाओं की कृत्रिम रचना को भारतीय समभाव की भावना के विपरीत बताया।

शोध-अंतर

अब तक के अध्ययनों में "सर्वधर्म समभाव" के वैदिक, भक्ति–सूफी और आधुनिक संवैधानिक पहलुओं पर स्वतंत्र रूप से चर्चा हुई है, किंतु इन सभी आयामों को जोड़कर तुलनात्मक अध्ययन का अभाव रहा है। उदाहरण स्वरूप, पीयू रिसर्च सेंटर (2021) के सर्वे में 84 प्रतिशत भारतीयों ने अन्य धर्मों का सम्मान करने को 'सच्चा भारतीय' होने का महत्वपूर्ण हिस्सा बताया। वर्तमान शोध इसी रिक्ति की पूर्ति करते हुए "इस सिद्धांत को भारतीय संस्कृति की समग्र जीवन–दृष्टि" के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

सनातन धर्म भारतीय संस्कृति का अनादि–शाश्वत आधार है, जो "अनंत–अपरिवर्तनीय" सिद्धांत पर टिका है। यह न संप्रदाय–केंद्रित है, न काल–स्थान–सीमित; बल्कि ब्रह्मांडीय "ऋत" का व्यावहारिक विज्ञान है, जो आचरण को नैतिक–आध्यात्मिक संतुलन देता है। वैदिक दर्शन में यह "धर्म" के रूप में उभरता है – सत्य की सार्वभौमिक व्यवस्था, जहाँ विविधता एकत्व की अभिव्यक्ति है। ऋग्वेद (1.164.46) का मंत्र "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" सत्य की एकता–बहुरूपता को प्रतिपादित करता है (ग्रिफिथ, 1896), जो समावेशी दृष्टि की जड़ है। छांदोग्य उपनिषद् (3.14.1) "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" से सृष्टि को एक ब्रह्म–रूप घोषित करता है (राधाकृष्णन, प्रिंसिपल उपनिषदस, 1953), जबकि भगवद्गीता (9.29) "समोऽहं सर्वभूतेषु" से समता–करुणा को धर्म का सार बनाती है (राधाकृष्णन, 1948, पृ. 276)। यह ढांचा "सर्वधर्म समभाव" को जन्म देता है – एक ऐसा सिद्धांत जो विभेद को संवाद में बदलता है। राधाकृष्णन (1953) इसे "दैवी चेतना का विकास" मानते हैं, जहाँ धर्म आचरण–विज्ञान है। गांधी (1924) ने यंग इंडिया में लिखा कि "सभी धर्म सत्य, किंतु अधूरे; सम्मान आवश्यक"– जो सहिष्णुता को कर्तव्य बनाता है। भार्गव (2007) ने द डिसटिंक्टिवनेस ऑफ इंडियन सेक्युलरिज़्म में इसे समावेशी धर्मनिरपेक्षता का आधार बताया है।

इस प्रकार, सनातन की सैद्धांतिक मजबूती समाज में समरसता स्थापित करती है और वैश्विक बहुलवाद का एक दृढ़ आधार बनाती है। यह धर्म को केवल पूजा–पद्धति नहीं, बल्कि नैतिक और सार्वभौमिक आचरण–सिद्धांत के रूप में प्रस्तुत करती है – जहाँ सहिष्णुता, समानता और संवाद मानवता के स्थायी मूल्य हैं।

विश्लेषण और चर्चा

विश्लेषण और चर्चा को तीन प्रमुख बिंदुओं में विभाजित किया गया है–

1. दार्शनिक, ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य– भारतीय दर्शन में "सर्वधर्म समभाव" केवल धार्मिक समानता नहीं, बल्कि अस्तित्व की एकात्म दृष्टि है। ऋग्वेद (1.164.46) में कहा गया– "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति"– अर्थात् सत्य एक है, परंतु ज्ञानी उसे अनेक रूपों में व्यक्त करते हैं (ग्रिफिथ, 1896, पृ. 245)। छांदोग्य उपनिषद (3.14.1) में कहा गया– "सर्वं खल्विदं ब्रह्म"– समस्त सृष्टि उसी एक ब्रह्म का रूप है (राधाकृष्णन, प्रिंसिपल उपनिषद्स, 1953, पृ. 72)। यह अद्वैत भावना ईश्वर, मानव और प्रकृति के अभिन्न संबंध को प्रकट करती है। भगवद्गीता (9.29) में श्रीकृष्ण कहते हैं "समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।" यह समत्व धर्म का नैतिक आधार बनता है (राधाकृष्णन, 1948, पृ. 276)। आदि शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत में यह विचार और गहन रूप में आया –"ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या, जीवो ब्रह्मैव नापर" (शंकराचार्य, विवेकचूड़ामणि, श्लोक 20)। रामानुजाचार्य (ग्यारहवीं शताब्दी) के विशिष्टाद्वैत सिद्धांत ने इस एकत्व को भक्ति और प्रेम के माध्यम से समाज में जीवंत रूप दिया (रामानुज, श्रीभाष्य, पृ. 118)। भारतीय दर्शन की यह धारा प्रतिपादित करती है कि धर्म केवल पूजा या आस्था नहीं, बल्कि जीवन का संतुलन और मानवता का व्यवहारिक विज्ञान है। इसीलिए "सर्वधर्म समभाव" भारतीय आत्मा का वह बोध है जो ज्ञान और आचरण दोनों में समरसता स्थापित करता है।

इतिहास में यह सिद्धांत विचार से आगे बढ़कर समाज और शासन की नीति बन गया। जैन आगम "आचारांग सूत्र" में कहा गया– "सव्वे पाणा न परिज्झायन्ति," अर्थात् सभी प्राणियों का जीवन समान है (जैन आगम, खंड 1, पृ. 32)। इसी भावना को बौद्ध "धम्मपद" में "सब्बे सत्ताः सुखी होन्तु" के रूप में विस्तार मिला (नारद थेरा, 1954, पृ. 211)। सम्राट अशोक ने अपने "धम्म शिलालेख" (बारहवाँ) में यह उद्घोष किया कि "सभी धर्मों का सम्मान ही धर्म का अंग है" (थापर, 1997, पृ. 142)। कौटिल्य (ईसा पूर्व 321– 297) ने "अर्थशास्त्र" (1.19) में कहा कि राजा को प्रजा के सुख–दुःख में समान भाव रखना चाहिए (कांग्ले, 1969 पृ. 42)। गुप्तकाल में धर्म, कला और दर्शन का समन्वय हुआ– बौद्ध, जैन और वैदिक परंपराएँ समान आदर से फली–फूलीं (अल्टेकर, 1957, पृ. 87)। मध्यकालीन भारत में संत और सूफी परंपराओं ने इस विचार को लोक–संस्कृति से जोड़ा। कबीर ने कहा– "हम न हिन्दू न मुसलमान" (बीजक, साखी 75,पृ.112)। तुलसीदास ने लिखा–"परहित सरिस धरम नहि

भाई"(रामचरितमानस,उत्तरकांड); गुरु नानकदेव का "एक ओंकार सतनाम" (जपुजी साहिब, पृ. 1) इस विचार को सार्वभौमिक स्तर पर प्रतिष्ठित करता है। सूफी कवि अमीर खुसरो की वाणी "हर कौम पुकारे खुदा को अलग–अलग नामों से" इस सत्य की पुष्टि करती है (खुसरो, कलाम, खंड 2, पृ. 64)। मुगल सम्राट अकबर की "सुलह–ए–कुल" नीति (16वीं शताब्दी) ने धार्मिक सहिष्णुता को प्रशासनिक नीति में रूपांतरित किया (अबुल फज़ल, आइन–ए–अकबरी, खंड 3, पृ. 312)। औपनिवेशिक काल में राजा राममोहन राय ने ब्रह्म समाज की स्थापना कर धर्म को तर्क और नैतिकता से जोड़ा (राममोहन राय, संकलित लेख, 1830,पृ. 56)। स्वामी विवेकानंद (1893) ने शिकागो में कहा– "सभी धर्म एक ही सत्य की ओर ले जाते हैं" (संपूर्ण कार्य, खंड 1,पृ.3)। गांधी (1924) ने लिखा– "धर्म मनुष्य को जोड़ता है, बाँटता नहीं" (यंग इंडिया, पृ. 15)। विनोबा भावे (1954) ने कहा –"सर्वधर्म समभाव का अर्थ है सब धर्मों का उत्थान, किसी का दमन नहीं" (सर्वधर्म समभाव, वर्धा, पृ. 42)। जयप्रकाश नारायण (1959) ने लिखा– "धर्म का अर्थ है मनुष्य के भीतर के ईश्वरत्व की अनुभूति" (भारतीय समाजवाद,पृ. 63)। भारतीय संविधान (1950) ने अनुच्छेद 25–28 में इसी समभाव को विधिक रूप प्रदान किया (संविधान सभा वाद–विवाद, खंड 7,पृ. 987)। इस प्रकार भारतीय संस्कृति का हर युग, हर परंपरा और हर विचारधारा "सर्वधर्म समभाव" के सिद्धांत को पोषित करती रही है। यह विचार भारतीय सभ्यता के उस सनातन सूत्र का प्रतिरूप है, जो कहता है "अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम, उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम" (महाउपनिषद्, 6. 71)। दार्शनिक, ऐतिहासिक और सांस्कृतिक दृष्टि से किया गया यह विश्लेषण सिद्ध करता है कि "सर्वधर्म समभाव" भारत की आत्मा का सार्वकालिक सिद्धांत है। यह केवल धार्मिक विचार नहीं, बल्कि जीवन–दर्शन है –जो विविधता में एकता, संवाद में सहिष्णुता और मानवता में ईश्वरत्व की भावना स्थापित करता है।

2. संवैधानिक, राजनीतिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य– भारतीय संविधान में "सर्वधर्म समभाव" का भाव केवल धार्मिक समानता का सिद्धांत नहीं है, बल्कि यह सामाजिक न्याय, स्वतंत्रता और समानता के समन्वय की संवैधानिक आत्मा है। संविधान की प्रस्तावना में निहित "न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व" के आदर्श धर्मनिरपेक्षता की भारतीय व्याख्या को मूर्त रूप देते हैं। अनुच्छेद 25 से 28 तक सभी नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता, विश्वास और उपासना का अधिकार दिया गया है, जो यह दर्शाता है कि धर्म और राज्य का संबंध विरोध का नहीं, बल्कि संवाद और संतुलन का है (भारतीय संविधान, 1950)। डॉ.

भीमराव अंबेडकर ने संविधान सभा में स्पष्ट कहा कि "राज्य किसी धर्म को न अपनाएगा, न किसी धर्म के विरुद्ध होगा; सभी धर्मों के प्रति समान दृष्टि रखेगा" (अंबेडकर, 1949, पृ. 987)। यह कथन भारतीय धर्मनिरपेक्षता की समावेशी परंपरा का प्रतीक है, जहाँ धार्मिक विविधता राष्ट्र की एकता का आधार बनती है। सर्वोच्च न्यायालय के एस.आर. बोम्मई बनाम भारत संघ (1994, एआईआर 1994 एससी 1918) मामले मेंयह प्रतिपादित किया कि धर्मनिरपेक्षता भारतीय संविधान की "बुनियादी संरचना" का अभिन्न अंग है।

राजनीतिक विचारक राजीव भार्गव (2007) के अनुसार "भारतीय धर्मनिरपेक्षता का अर्थ धर्म से दूरी नहीं, बल्कि सभी धर्मों के प्रति समान व्यवहार है" (द डिसटिंक्टिवनेस ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़्म, पृ. 22)। यह व्याख्या स्पष्ट करती है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता, पश्चिमी 'सेपरेशन मॉडल' की अपेक्षा अधिक 'इक्वल रिस्पेक्ट मॉडल' है। एन्क्रिको बेल्ट्रामिनी (2023) ने इंडियन थियोलॉजी एंड द क्राइसिस ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़्म" में कहा "भारत एक धार्मिक समाज है, जहाँ सेक्यूलरिज़्म धर्म से विरोध नहीं, बल्कि संवाद की प्रक्रिया है" (स्टडीज़ इन वर्ल्ड क्रिश्चियनिटी, खंड 31, अंक 1 पृ. 47– 65)। यह दृष्टिकोण भारतीय "सर्वधर्म समभाव" की आधुनिक संवैधानिक अभिव्यक्ति है।

महात्मा गांधी (1924) ने यंग इंडिया में लिखा कि "सभी धर्म समान रूप से सत्य हैं, किंतु सभी अधूरे हैं; अतः एक–दूसरे के प्रति सम्मान आवश्यक है" (पृ. 15)। गांधी के लिए धर्म सेवा, सत्य और अहिंसा का पर्याय था– न कि संप्रदाय या संस्था। विनोबा भावे (1954) ने सर्वधर्म समभाव में कहा– "सर्वधर्म समभाव का अर्थ है सब धर्मों का उत्थान, किसी का दमन नहीं" (पृ. 42)। जयप्रकाश नारायण (1959) ने भारतीय समाजवाद में लिखा– "धर्म का अर्थ है मनुष्य के भीतर के ईश्वरत्व की अनुभूति" (पृ. 63)। इन विचारों में धर्म को आध्यात्मिक अनुभव और सामाजिक समानता दोनों के स्तर पर जोड़ा गया है।

सुनील खिलनानी (1998) ने द आइडिया ऑफ इंडिया में लिखा कि "भारतीय राज्य मुक्ति और न्याय का माध्यम है; यह धर्मनिरपेक्षता का भारतीय रूप है" (पृ. 3)। ग्यान प्रकाश (1999) ने अनदर रीजनः साइंस एंड द इमैजिनेशन ऑफ मॉडर्न इंडिया में कहा कि भारत की आधुनिकता पश्चिम की नकल नहीं, बल्कि अपनी सभ्यतागत चेतना से उत्पन्न वैकल्पिक आध्यात्मिक आधुनिकता है (पृ. 7)। इस दृष्टि से "सर्वधर्म समभाव" केवल ऐतिहासिक या धार्मिक विचार नहीं, बल्कि आधुनिक सामाजिक दर्शन का भी अभिन्न अंग है।

औपनिवेशिक परिप्रेक्ष्य में सारिता पिर्साली (2022) ने होमोजिनिटी ऑफ

रिलिज़न में दर्शाया कि ब्रिटिश शासन के दौरान आर्य समाज, ब्रह्म समाज और सिंह सभा जैसे सुधार आंदोलनों ने धार्मिक एकरूपता को बढ़ावा दिया, जिससे भारतीय बहुलता की परंपरा पर प्रभाव पड़ा (पृ. 130)। केनेथ डब्ल्यू. जोन्स (1989) ने सोशियो–रिलिजियस रिफॉर्म मूवमेंट्स इन ब्रिटिश इंडिया में कहा कि सुधार आंदोलनों ने धार्मिक विविधता को नैतिक रूप से एकरूप दिशा में मोड़ा (पृ. 41)। वसुंधरा डालमिया एवं हेनरिख फॉन स्टिटेनक्रोन (2000) की रिप्रेजेंटिंग हिंदुइज़्मः द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस ट्रेडिशन्स एंड नेशनल आइडेंटिटी में यह स्पष्ट किया गया कि औपनिवेशिक विमर्श ने हिंदू धर्म को एकसमान इकाई के रूप में प्रस्तुत किया (पृ. 11)। हर्जोट ओबरॉय (1994) ने द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस बाउंड्रीज़ः कल्चर, आइडेंटिटी एंड डायवर्सिटी इन द सिख ट्रेडिशन में कहा कि धार्मिक सीमाओं की कृत्रिम रचना भारतीय समभाव की भावना के विपरीत थी (पृ. 12)।

सामाजिक व्यवहार में "सर्वधर्म समभाव" भारतीय लोकजीवन का अभिन्न हिस्सा है। गाँवों में साझा त्योहार, नगरों में पारस्परिक सह–उत्सव और अंतरधार्मिक सहभागिता इस भावना की जीवंत मिसाल हैं। उदाहरण के लिए, 2024 में अयोध्या राममंदिर उद्घाटन के अवसर पर अनेक मुस्लिम समुदायों ने शांति और सद्भाव की प्रार्थना की– यह भारतीय समभाव की सामाजिक अभिव्यक्ति का सजीव उदाहरण है। भारतीय समाज में धर्म का अर्थ पूजा–पद्धति नहीं, बल्कि नैतिक आचरण है। यही कारण है कि जब राजनीति कभी–कभी धर्म का प्रयोग विभाजन के लिए करती है, तब भी समाज स्तर पर सह–अस्तित्व की परंपरा कायम रहती है। यह दृष्टि गांधी और अंबेडकर दोनों के विचारों में दिखाई देती है – जहाँ गांधी ने कहा कि "धर्म जोड़ता है," वहीं अंबेडकर ने धर्म को "नैतिक राज्य का आधार" बताया। भारतीय संविधान ने इस भावना को विधिक रूप में प्रतिष्ठित किया। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि "सर्वधर्म समभाव" का संवैधानिक रूप न्याय और स्वतंत्रता के मूल अधिकारों में, राजनीतिक रूप गांधी–विनोबा–जयप्रकाश की नैतिक राजनीति में, और सामाजिक रूप लोकजीवन की समरसता में प्रकट होता है। यही विचार भारत की आधुनिक पहचान और वैश्विक मानवता का आधार है।

3. समकालीन वैश्विक परिप्रेक्ष्य– वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में जब धर्म और संस्कृति राजनीतिक पहचान के साधन बनते जा रहे हैं, ऐसे समय में भारतीय "सर्वधर्म समभाव" की अवधारणा एक नैतिक दिशा प्रदान करती है। विश्व के अनेक भागों में धार्मिक असहिष्णुता, नस्लीय तनाव और सांस्कृतिक

संघर्ष बढ़ रहे हैं। इन परिस्थितियों में भारत का यह दृष्टिकोण कि "सत्य एक है, परंतु अभिव्यक्तियाँ अनेक हैं" (ऋग्वेद, 1.164.46) – आज भी सबसे समकालीन और आवश्यक सिद्धांत के रूप में प्रतिष्ठित है।

महात्मा गांधी (1924) ने यंग इंडिया में लिखा कि "सभी धर्म समान रूप से सत्य हैं, किंतु सभी अधूरे हैं; इसलिए एक–दूसरे के प्रति सम्मान आवश्यक है" (पृ. 15)। यह दृष्टिकोण आज के वैश्विक विमर्शों में "धर्म–संवाद" और "मानवीय सह–अस्तित्व" का आधार बन चुका है। संयुक्त राष्ट्र संघ और यूनेस्को के "सभ्यताओं के संवाद" जैसे कार्यक्रमों में इसी भारतीय दृष्टिकोण की झलक मिलती है, जहाँ विविधता को विभाजन नहीं, बल्कि एकता का सेतु माना गया है।

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (1953) ने कहा कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता "आध्यात्मिक लोकशाही" है (द प्रिंसिपल उपनिषद्स, पृ. 44)। ए. जी. नूरानी (2010) के अनुसार "भारत की धर्मनिरपेक्षता किसी निषेध पर नहीं, बल्कि सह–अस्तित्व की सक्रिय प्रक्रिया पर आधारित है" (इंडिया एंड सेक्युलरिज़्मः ए स्टडी इन द पॉलिटिकल थॉट ऑफ मॉडर्न इंडिया, पृ. 54)। ये दोनों दृष्टियाँ यह सिद्ध करती हैं कि भारतीय परंपरा ने धर्म को हमेशा नैतिक आचरण और सामाजिक संतुलन के रूप में देखा है।अमेरिकी विद्वान डोनाल्ड यूजीन स्मिथ (1963) ने कहा कि भारत की धर्मनिरपेक्षता "अनुभवजन्य सह–अस्तित्व" की उपज है (इंडिया ऐज़ ए सेक्युलर स्टेट, पृ. 146)। यूरोप में जहाँ धर्मनिरपेक्षता सत्ता और चर्च के संघर्ष से जन्मी, वहीं भारत में यह विविधता में एकता की चेतना से विकसित हुई। इसी तथ्य को लॉसोनजी और वान हर्क (2017) ने रेखांकित किया कि "भारत का अनुभव पश्चिम के लिए एक वैकल्पिक प्रतिमान है, जहाँ भिन्नता विभाजन नहीं, संतुलन का माध्यम बनती है" (धर्मनिरपेक्षता, धर्म और राजनीतिरू भारत और यूरोप, पृ. 65)।

भारत ने अपने सांस्कृतिक और कूटनीतिक व्यवहार में भी इस दृष्टिकोण को साकार किया है। अंतरराष्ट्रीय योग दिवस (2014) और वैश्विक बौद्ध सम्मेलन (2023) में भारत ने "वसुधैव कुटुम्बकम " के संदेश को विश्व मानवता के साझा भविष्य के रूप में प्रस्तुत किया। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने संयुक्त राष्ट्र महासभा (2023) में कहा कि "भारत की सभ्यता का सार यही है कि विविधता ही उसकी एकता है।" यह कथन "सर्वधर्म समभाव" की आधुनिक राजनीतिक पुनर्पुष्टि के रूप में देखा जा सकता है।वर्तमान में विश्व शांति, पर्यावरण, और शिक्षा से जुड़े विमर्शों में भी भारतीय दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक हुआ है। "पारिस्थितिक धर्मनिरपेक्षता" का विचार बताता है कि धर्म केवल पूजा–पद्धति

नहीं, बल्कि प्रकृति और जीवन के प्रति उत्तरदायित्व की भावना भी है–जैसा कि भगवद्गीता (3.10) में कहा गया है: "प्रजा सृष्ट्वा पुरा देवाः यज्ञेन प्रतिष्ठिताः।" इस प्रकार "सर्वधर्म समभाव" का भारतीय दर्शन अब सीमित धार्मिक विमर्श से आगे बढ़कर विश्वशांति, शिक्षा, संस्कृति, और पर्यावरण नीति तक विस्तृत हो चुका है। यह केवल भारत की सांस्कृतिक पहचान नहीं, बल्कि वैश्विक मानवता की नैतिक चेतना का स्थायी मार्गदर्शक बन गया है।

निष्कर्ष

"सर्वधर्म समभाव" भारतीय चिंतन परंपरा की वह शाश्वत धारा है, जिसने वेदों से लेकर आधुनिक संविधान तक भारत की आत्मा को एकसूत्र में बाँधा है। यह केवल धार्मिक सहिष्णुता का विचार नहीं, बल्कि जीवन–दर्शन का वह व्यावहारिक सिद्धांत है जिसमें "एकत्व में अनेकत्व" का भाव निहित है। ऋग्वेद के "एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति" से लेकर महात्मा गांधी के "सत्य और अहिंसा" तक यह स्पष्ट होता है कि भारतीय संस्कृति ने सदैव विविधता को विरोध नहीं, बल्कि संवाद और सामंजस्य का आधार माना है।

दार्शनिक दृष्टि से "सर्वधर्म समभाव" उस आत्मिक एकता का प्रतिरूप है जो व्यक्ति, समाज और सृष्टि को एक साझा चेतना में देखती है। भारतीय अध्यात्म ने धर्म को केवल आस्था या अनुष्ठान नहीं, बल्कि आचरण, नैतिकता और लोककल्याण का साधन माना है। यही कारण है कि "धर्म" यहाँ जीवन का पर्याय है, जो सत्य, करुणा और सह–अस्तित्व पर आधारित है।

ऐतिहासिक दृष्टि से यह विचार भारत की सभ्यता के विकास के साथ निरंतर परिपक्व हुआ– वैदिक ऋषियों के ज्ञान से लेकर अशोक के धम्म, कबीर–नानक की वाणी, अकबर के सुलह–ए–कुल, गांधी के सत्य–अहिंसा और संविधान के अनुच्छेद 25–28 तक इसकी जीवन्त परंपरा चलती रही। इसने यह सिद्ध किया कि भारतीय समाज की स्थिरता और जीवंतता का रहस्य उसकी सांस्कृतिक समावेशिता और नैतिक बहुलता में निहित है।

राजनीतिक दृष्टि से "सर्वधर्म समभाव" भारतीय धर्मनिरपेक्षता का हृदय है, जहाँ राज्य किसी धर्म का विरोध नहीं करता, बल्कि सब धर्मों के समान सम्मान को अपने शासन–सिद्धांत का अंग बनाता है। यह विचार आधुनिक लोकतंत्र को नैतिक गहराई देता है और नागरिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना भी जगाता है।

समकालीन परिप्रेक्ष्य में यह सिद्धांत केवल धार्मिक समानता का प्रतीक नहीं, बल्कि वैश्विक मानवता की चेतना का मार्गदर्शक बन चुका है। जब दुनिया

धार्मिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विभाजनों से जूझ रही है, तब भारतीय दृष्टि यह सिखाती है कि सहिष्णुता, संवाद और प्रेम ही स्थायी शांति का आधार हैं।

अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि "सर्वधर्म समभाव" भारतीय संस्कृति की आत्मा है– यह न केवल धर्मों के बीच समरसता का दर्शन है, बल्कि वह मानवीय नीति है जो विश्वशांति और सार्वभौमिक मानवता के लिए आज भी सबसे अधिक प्रासंगिक है। यही भारत का सनातन संदेश है, जिसने सदैव कहा– "वसुधैव कुटुम्बकम" अर्थात् संपूर्ण पृथ्वी एक परिवार है।

संदर्भ

- अंबेडकर, भीमराव रामजी. (1949). संविधान सभा वाद–विवाद. लोकसभा सचिवालय, नई दिल्ली.
- अल्टेकर, ए. एस. (1957). राज्य एवं शासन प्राचीन भारत में. बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय प्रेस, वाराणसी.
- अशोक, सम्राट. (तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व). धम्म शिलालेख. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, नई दिल्ली.
- कबीर. (15वीं शताब्दी). बीजक. कबीर चौरा प्रकाशन, वाराणसी.
- कांगले, आर. पी. (1969). द कौटिल्य अर्थशास्त्र. चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी.
- खिलनानी, सुनील. (1998). द आइडिया ऑफ इंडिया. पेंगुइन बुक्स, लंदन.
- गांधी, मोहनदास करमचंद. (1924). यंग इंडिया. नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद.
- ग्यान प्रकाश. (1999). अनदर रीजनः साइंस एंड द इमैजिनेशन ऑफ मॉडर्न इंडिया. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस.
- जैन आगम. (प्राचीन). आचारांग सूत्र. जैन आगम प्रकाशन, लाडनूँ.
- जयप्रकाश नारायण. (1959). भारतीय समाजवाद. बिहार विद्यापीठ, पटना.
- जोंस, केनेथ डब्ल्यू. (1989). सोशियो–रिलिजियस रिफॉर्म मूवमेंट्स इन ब्रिटिश इंडिया. मनोहर पब्लिकेशन, नई दिल्ली.
- डालमिया, वसुंधरा एवं फॉन स्टिटेनक्रोन, हेनरिख. (2000). रिप्रेज़ेंटिंग हिंदुइज़्मः द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस ट्रेडिशन्स एण्ड नेशनल आइडेंटिटी. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.
- नारद थेरा. (1954). धम्मपद. बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी, श्रीलंका.
- नूरानी, ए. जी. (2010). इंडिया एंड सेक्यूलरिज़्मः ए स्टडी इन द पॉलिटिकल थॉट ऑफ मॉडर्न इंडिया. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.
- भावे, विनोबा. (1954). सर्वधर्म समभाव. सर्व सेवा संघ प्रकाशन, वर्धा.

- भार्गव, राजीव. (2007). द डिसटिंक्टिवनेस ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़्म. टी. एन. श्रीनिवासन (संपा.), द फ्यूचर ऑफ सेक्यूलरिज़्म. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली.
- महाउपनिषद्. (प्राचीन). महाउपनिषद्. चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी.
- राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. (1948). भगवद्गीता. जॉर्ज एलन एंड अनविन, लंदन.
- राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. (1953). द प्रिंसिपल उपनिषद्स. जॉर्ज एलन एंड अनविन, लंदन.
- रामानुजाचार्य. (11वीं शताब्दी). श्रीभाष्य. चौखम्बा संस्कृत सीरीज़, वाराणसी.
- राममोहन राय. (1830). ब्रह्म समाज पत्रावली. एडवर्ड प्रेस, कोलकाता.
- बेल्ट्रामिनी, एन्क्रिको. (2023). इंडियन थियोलॉजी एंड द क्राइसिस ऑफ इंडियन सेक्यूलरिज़्म. स्टडीज़ इन वर्ल्ड क्रिश्चियनिटी, 31(1). 47– 65.
- लॉसनजी, पीटर एवं वान हर्क, वाल्टर. (2017). सेक्युलरिज़्म, रिलिज़न ऐंड पॉलिटिक्सः इंडिया ऐंड यूरोप. टेलर एंड फ्रांसिस, लंदन.
- विवेकानंद, स्वामी. (1893). संपूर्ण कार्य. अद्वैत आश्रम, कोलकाता.
- ओबरॉय, हर्जोट. (1994). द कंस्ट्रक्शन ऑफ रिलिजियस बाउंड्रीज़: कल्चर, आइडेंटिटी एण्ड डायवर्सिटी इन द सिख ट्रेडिशन. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली.
- पिर्साली, सारिता. (2022). होमोजिनिटी ऑफ रिलिज़न. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी ट्रेंड्स, 2(2). 1–15.
- ग्रिफ़िथ, राल्फ टी. एच. (1896). ऋग्वेद –सूक्त 1.164.46. मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली.
- स्मिथ, डोनाल्ड यूजीन. (1963). इंडिया ऐज़ ए सेक्युलर स्टेट. प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस.

असिस्टेंट प्रोफेसर – राजनीति विज्ञान,
सहकारी पी.जी. कॉलेज, मिहरावां, जौनपुर